International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

हिंदुस्तानी संगीत की ऐतिहासिक विरासत का अवलोकन वीणाओ के परिदृश्य में

दीपा खिलवानी[1], प्रो. (डॉ.) रुचिमिता पांडे[2]

[1]शोधार्थी (संगीत विभाग), शोध केंद्र, दयानंद गर्ल्स पी.जी. कॉलेज, कानपुर
[2]शोध पर्यवेक्षक, दयानंद गर्ल्स पी.जी. कॉलेज, कानपुर

सारांश -

जब हम संगीत के इतिहास पर दृष्टिपात करते हैं तो हम पाते है कि वाद्यों का एक विस्तृत संसार हमारे समक्ष उपलब्ध है जो इस बात की पुष्टि करते हैं कि संगीत हर युग में विद्यमान था। वाद्ययंत्रों की एक लंबी विरासत है जो संगीत का प्रमाण प्रस्तुत कर संगीत के विकास को क्रमिक रूप से प्रस्तुत करने में सक्षम हैं। हिंदुस्तानी संगीत की विरासत में वीणाओ का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता हैं। वीणाओ का स्वरूप वैदिक काल से ही देखने को मिलता हैं, उस समय प्रत्येक तन्त्री वाद्यों के लिए वीणा शब्द का प्रयोग किया जाता था। प्राचीनकाल से आधुनिकाल तक वीणा हिंदुस्तानी संगीत का महत्वपूर्ण वाद्य माना जाता हैं। भरत, मतंग, शारंगदेव, नारद आदि विद्वानों के ग्रंथों में वीणा का उल्लेख देखने को मिलता हैं। वीणाओं के इतिहास पर यदि दृष्टिपात करें तो प्राचीनकाल से आधुनिकाल तक में अनेक वीणाए देखने को मिलती हैं। प्राचीनकाल में जहां रुद्र वीणा, सरस्वती वीणा, एकतंत्री वीणाए प्रचलित थी, वहीं वर्तमान समय में सितार, सरोद और संतूर जैसे तंत्र वाद्य प्रचलित हैं, यह वाद्य भी प्राचीन वीणाओं का परिवर्तित स्वरूप माना जाता हैं। माना जाता हैं कि जैसे जैसे गायन शैलियां विकसित होती गई, वैसे ही तंत्र वाद्य भी विकसित होते गए। मध्यकाल में जहां ध्रुपद जैसे गंभीर गायकी प्रचलित थी, तथा उसके साथ रुद्र वीणा की संगति उचित मानी जाती थी, वही वर्तमान समय में ख्याल, ठुमरी आदि श्रृंगाररस प्रधान गायक शैलियों के साथ सितार, संतूर आदि वाद्यों की संगति महत्वपूर्ण मानी जाती हैं।

प्रस्तुत शोध पत्र भी वीणाओं के महत्व को ध्यान में रखकर लिखा गया हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में वीणाओं के ऐतिहासिक अध्ययन का प्रयत्न किया गया हैं और सभी प्रकार की वीणाओं के अस्तित्व और वर्तमान में उनकी प्रमाणिकता स्थापित की है।

मुख्य शब्द - वीणा, सितार, हिंदुस्तानी संगीत, विरासत, संगीत इतिहास, तंत्र वाद्य, वैदिक काल

प्रस्तावना -

प्राचीनकाल से लेकर आधुनिककाल तक के विद्वानों ने आतोद्य के चार प्रकार माने तत्, अवनद्ध, घन, सुशिर। तंत्र वाद्यों को पुनः दो भागों में बांटा जिसमें प्रथम वे वाद्य माने जिसमें स्वरों की उत्पति मिज़राब, बट्टा और अंगुलियों के द्वारा होती है जिसे तत् वाद्य कहा गया, दूसरा वे वाद्य जिसमें स्वरों की उत्पति गज़, कमानी आदि के द्वारा होती हैं उन वाद्यों वितत् कहा गया। वीणा एक प्राचीन वाद्य है जिसकी उत्पति मां सरस्वती द्वारा मानी जाती हैं।

वीणाओं की बनावट, तन्त्री संख्या, निर्माण आदि द्वारा अनेक वीणाए प्राचीनकाल से देखने को मिलती हैं जैसे रुद्र वीणा, सरस्वती वीणा, एकतंत्री आदि। वीणाओ के इतिहास पर दृष्टिपात करें तो यह सिद्ध होता हैं कि शास्त्रीय संगीत के तंत्र वाद्यों को दो वर्गों में बांटा गया हैं, प्रथम वह जिसका संबंध प्राचीनकालीन वाद्यों से जोड़ा गया है जिसमें रुद्र वीणा, तंजोरी वीणा आदि वीणाए जो मध्यकाल में विकसित हुई, तथा द्वितीय वीणाये जिसका संबंध आधुनिककालीन वीणाओ से जोड़ा गया है जैसे सितार, संतूर, सरोद आदि। प्राचीनकालीन वीणाए बजाने में क्लिष्ठ और ध्वनि तेज नाद युक्त थी इन्हीं वीणाओं में उचित परिवर्तन कर नए वाद्य विकसित हुए जो आधुनिककाल में देखने को मिलते है। इस प्रकार निष्कर्ष रूप से यह कहा जा सकता है कि आधुनिक काल में प्रचलित तंत्र वाद्य भी इन्हीं प्राचीन वीणाओं का सुधरा हुआ रूप है। भरत ने वीणाओ को दो वर्गों में बांटा प्रथम अंग संज्ञक जिसमें चित्रा तथा विपंची दूसरा प्रत्यंग वीणाए जिसमें कच्छपी तथा घोषिका वीणा को रखा।

1_ अलाबु वीणा - वैदिक साहित्य में अलाबु वीणा का वर्णन प्राप्त होता हैं, वैदिक इंडेक्स के अनुसार अलाबु का अर्थ लौकी माना गया हैं। नान्यदेव के अनुसार अलाबु में दो तार होते थे द्वितंत्रिका तु विज्ञेया अलाबुयाड ग संज्ञता । श्री तालेकर के अनुसार श्रोत सूत्र में वीणा के रूप में अलाबु का उल्लेख मिलता हैं जो तुंब युक्त थी। श्री के वासुदेव शास्त्री के अनुसार अलाबु वीणा तुंब युक्त थी। पाणिनि द्वारा लिखित ग्रन्थ पाणिनीय शिक्षा के श्लोक संख्या 23 में इस वीणा का वर्णन देखने को मिलता हैं पाणिनि ने अपने ग्रन्थ में अलाबु के साथ निर्घोष शब्द प्रयुक्त किया है, जिससे ऐसा अनुमान लगाया जा सकता हैं कि अलाबु वीणा का प्रयोग तानपुरे के समान होता होगा। अलाबु वीणा निर्घोषों दंतमूल्यः । आश्वलायन गृहसूत्र के अनुसार इस वीणा में पर्दे बांधे जाते हैं तथा ये नखी (मिज़राब) से बजाई जाती थी।

उपर्युक्त विवरण के अनुसार अलाबु वीणा तुंब युक्त वीणा थी, जिसका स्वरूप आधुनिक तानपुरे के समान बताया गया हैं।

2_ आलापनी वीणा - संगीत रत्नाकर, संगीत समयसार, संगीत सुधा, वाद्यप्रकाश और यंत्रकोष इत्यादि ग्रंथों में इस वीणा का वर्णन प्राप्त होता हैं। शारंगदेव द्वारा रचित संगीत रत्नाकर में इसकी निर्माण विधि का भी वर्णन किया गया है, वीणा प्रपाठक पुस्तक में संगीत रत्नाकर के ही श्लोकों को उद्धृत किया है, इसके बजाने की शैली या ढंग के सम्बंध में यह निर्देश दिया है कि अपनी छाती के पास रखिए और बाँये हाथ के अंगूठे को दण्ड पर, बाये हाथ की तर्जनी उगली से तार दबाकर दाहिने हाथ से बिन्दु धातु की क्रिया से बजाना चाहिए। आलापनी वीणा का आकार प्रकार कुछ विद्वानों के अनुसार इसे त्रितंत्री वीणा के समान बताया है अर्थात् इसमे दो तुम्बे होते थे। रत्नाकर के अनुसार इस वीणा का आकार कहाड़ी की तरह आधा कटा हुआ होता था और इसमें दो तन्त्रिया लगी होती थी। 7 वी शती में रचित बृहददेशी ग्रंथ के रचनाकार मतंगमुनि ने इस वीणा को निबद्गान यानी स्वर और तालबद्ध रचनाओं के साथ बजाने का उल्लेख किया है।

3. कात्यायन (कात्यायनी वीणा)- कात्यायन वीणा का उल्लेख किसी भी प्राचीन ग्रंथों में नहीं किया गया है। अहोबल ने अपने ग्रंथ में कुल आठ वीणाओं का नामोल्लेख किया है उन वीणाओं की सूची में भी इस वीणा का नाम देखने का नही मिलता है। सुरेंद्रमोहन (ठाकुर) टैगोर अपनी पुस्तक यन्त्रकोष में शततन्त्री वीणा को ही कात्यायनी वीणा कहाँ है। उनके अनुसार यह वीणा लकड़ियों की सहायता से बजाई जाती थी। आधुनिक काल में सन्तूर को भी लकड़ियो की दो डण्डियों से बजाया जाता है जिसमे 100 से 125 तार होते है।

4. घोषका वीणा- महर्षि मरत ने इस वीणा को प्रत्यंग वाद्यों के अन्तर्गत रखा है. परन्तु इसका विस्तृत वर्णन उन्होंने अपने ग्रंथ में नहीं किया है। घोषका वीणा जिसे घोषावती घोषा, घोषक ब्राह्मी तथा एकतन्त्री वीणा भी कहते थे। इस वीणा पर सभी विद्वानो ने अपने अलग-अलग मत दिए है, सुधाकलश ने अपने ग्रन्थ में घोषावती तथा ब्राह्मी वीणा के अलग-अलग नाम दिए है, परन्तु उन्होंने एकतन्त्री वीणा का कहीं भी उल्लेख नहीं किया है। सोमेश्वर ने अपने ग्रंथ ने एकतंत्री का उल्लेख तो किया है. परन्तु घोषावती का उल्लेख देखने को नहीं मिलता। शारगदेव अनुसार एकतन्त्री वीणा को ही घोषक वीणा कहा जाता है। उन्होंने अपने ग्रन्थ में धोषावती, वीणा का वर्णन नहीं किया है। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि जिन्होंने घोषावती का वर्णन किया है. उन्होंने एकतन्त्री का नहीं किया है और जिन्होंने एकतन्त्री का किया है, उन्होंने घोषावती का अलग से वर्णन नहीं किया है। उपर्युक्त मतानुसार एकतन्त्री वीणा को ही घोषा तथा ब्राह्मी वीणा कहते थे, जिसमे एकतन्त्री होती थी।

5. त्रितन्त्री वीणा- त्रितन्त्री वीणा प्राचीन वीणाओं में से एक है अर्थात जिस प्रकार अन्य वीणाओं का नामोल्लेख मात्र प्राप्त होता है विस्तृत वीणा वर्णन देखने को नहीं मिलता उसी प्रकार त्रितन्त्री वीणा का केवल नामोल्लेख देखने को मिलता है। कुछ विद्वानानुसार इसने तीन तार होते थे इसलिए इसे त्रितन्त्री

वीणा कहते थे। शारंगदेव ने अपने ग्रंथ में इस वीणा का वर्णन किया है। संगीत रत्नाकर टीकाकार कल्लिनाथ ने त्रितन्त्री वीणा को लोक में अर्थात् जनमानस में जन्त्र कहा है। सिंह भूपाल मतानुसार तीन तारों से युक्त वीणा को त्रितन्त्री वीणा कहते थे। एस एम टैगोर ने विलन्त्री की तुलना कच्छपी वीणा से की है। प्राचीन समय में अनेक वीणाएँ देखने को मिलती है, किन्तु प्राचीन ग्रंथों में विस्तृत उल्लेख न मिलने के कारण इसके स्वरूप, आकार प्रकार तथा बादन विधि का अनुमान लगाना कठिन है। अनेक विद्वानो मतानुसार त्रितन्त्री वीणा में आवश्यक सुधार करके आधुनिक संगीत में प्रचलित तन्त्रवाद्य सित्तार का स्वरूप विकसित हुआ।

6. निःशक वीणा- इस वीणा का सर्वप्रथम उल्लेख संगीत रत्नाकर में प्राप्त होता है उन्होंने, अपने ग्रंथ में इस वीणा के स्वरूप तथा उसकी वादन विधि का भी विस्तृत अध्ययन किया है। कुछ विद्वानों मतानुसार शारगदेव की वीणा का नाम निःशक वीणा है। संगीतराज, संगीतसार, वाद्य प्रकाश तथा वाद्यरत्नकोष में भी इस एक वीणा का नामोल्लेख प्राप्त होता है। इसकी वादन विधि के सन्दर्भ शारंगदेव जी कहते है कि वाम जंधा के मूल से वीणा के अगले भाग को आकान्त करके पृथ्वी से सटे हुए पाश्वं भाग पर रख लेते है. उसके बाद अपनी दाहिनी जंघा से उसे पकड़ कर पिनाकी वीणा की भाँति उसका वादन किया जाता है, दूसरी विधिनुसार गीले चमड़े की बनी पेशी (मासपिंड) अच्छी तरह सुखाकर कठोर बना दिया जाता है. उक्त कोण को अपने बाये हाथ में लेकर उसी कोण से सारणा की जाती है। जिससे मन्द्र, मध्य, तार तथा रागादि स्वरो की कुशल अभिव्यक्ति होती है। शांरगदेवनुसार इस वीणा चार तार होते थे तथा आकृति आलापनी वीणा जैसी होती थी, एक तुम्बा तथा पिनाकी वीणा की तरह वादन किया जाता था।

7. पारिवादिनी वीणा- स्वरजिता रंजितावशमाययु अर्थात सात तारों से युक्त वीणा को परिवादनी कहते है प्राचीन विद्वानांनुसार परिवादिनी में सात तार होते थे। इस वीणा के स्वरूप तथा इसकी वादन विधि के बारे में कही भी उल्लेख प्राप्त नहीं होता। इसका नामोल्लेख संगीत मकरन्द में भी प्राप्त होता है।

8. पिनाकी वीणा- पिनाकी वीणा भी एक प्राचीन वीणा है। विद्वानानुसार प्राचीन संगीत के एक तन्त्रवाद्य को पिनारू कहाँ जाता था। कैलाश पंकज श्रीवास्तव के अनुसार इसमे एक तार होता था और इसे अंगुलियों से छेडकर बजाया जाता था। कुछ विडानो अनुसार इसका अविष्कार भगवान शिव द्वारा हुआ, शिव को भी पिनाकी कहा जाता है क्योकि उनके धनुश का नाम पिनाकी था। संगीत रत्नाकर के रचयिता पं शारंगदेव ने अपने ग्रंथ के वदयाद्याय में इस वीणा का विस्तृत वर्णन किया है। उन्होंने अपने ग्रन्थ में इसकी वादन विधि अर्थात वीणा बजाते समय वादक/वादिका को किस तरह बैठना चाहिए उसका भी निर्देश उन्होंने ग्रंथ में दिया है। सुधाकलश अनुसार इसमें दो तुम्बे होते थे और गज से बजाया जाता था। इस वीणा का उल्लेख कैप्टन सी. आर. के. श्री परांजपे, पं. हरिपाल, पं. सुधाकलश,

आदि विद्वानों ने अपने ग्रन्ध में इस वीणा का वर्णन किया है। शांरगदेव अनुसार यह वीणा अन्य वीणाओं की अपेक्षा छोटी होती थी और इसका वादन गज (धनुष) से किया जाता था. आधुनिककाल में सांरगी का वादन भी गज से किया जाता है अर्थात् परिवादिनी वीणा को आधुनिक सांरगी का सुधरा हुआ रूप कहा जा सकता है।

9. महती वीणा- महती नारदस्य च अर्थात् नारद की वीणा का नाम महती वीणा है। सुधाकलश के अनुसार इसमें 21 तार होते थे. तीन ग्राम और 21 मूर्छनाये प्राप्त थी। इस वीणा के स्वरूप तथा इसकी वादन विधि के विषय में विद्वानों के अलग-अलग मत प्राप्त होते है. कुछ विद्वानांनुसार महती वीणा के वादक नारद है जिससे ये नख से बजाया करते थे। इस वीणा का नामोल्लेख संगीत मकरन्द, संगीतोपनिषत्सारोद्वार, अभिज्ञान चिन्तामणि आदि ग्रन्थों में देखने को मिलता है।

10. तंजौरी वीणा- तंजौर वीणा जिसे दक्षिणात्य वीणा के नाम से भी जाना जाता है। यह मूल रूप से दक्षिणी भाग में प्रचलित है। इसमें 21 सरिकाएँ 4 मूल तन्त्रियों, एवं 3 चिक्कारियों होती है। इस वीणा में हर एक स्थान के लिए सरिकाएँ होती है। मूल तत्रियों मुक्तावस्था में मध्य षडज, मध्य पंचम, मन्द्र षड्ज और अतिमन्द्र पंचम में बोलते है। इस वीणा का वादन अंगुली में मिजराब पहन कर किया जाता है। कुछ विद्वान इस वीणा को अंगुलियों से भी बजाते है। इस वीणा के स्वरूप के विकास के बारे में कहा जाता है कि इसका विकास 1336 ई. में माधवाचार्य विद्यारण्य (जो विजयनगर के महामन्त्री थे) ने किया, ऐसी लोक मान्यता रही है।

11. मत्तकोकिला वीणा- भरत ने अपने ग्रंथ नाटयशास्त्र में 21 तारों वाली वीणा का वर्णन किया है, पर उहोंने मतकोकिला का वर्णन नहीं किया है। भरत से पूर्व भी मत्तकोकिला का वर्णन किसी भी ग्रंथ में प्राप्त नहीं होता है। भरत काल में वीणाओं पर सरिकाएँ नहीं होती थी, जबकि प्रत्येक स्वर के लिए अलग-अलग तार होते थे। मतकोकिला का सर्वप्रथम वर्णन शांरगदेय द्वारा रचित संगीत रत्नाकर ग्रन्थ में प्राप्त होता है. ग्रन्धानुसार इस वीणा में 21 तार होते है। और यह तीन स्थान (मन्द्र, मध्य, तार) से विभूषित है। आचार्य कैलाशचन्द्र देव बृहस्पति के अनुसार भी इसमें 21 तार होते थे और तीन स्थानों से विभूषित थी। मत्तकोकिला को शारीरी या शरीर वीणा भी कहा जाता है क्योंकि यह मानव कंठ से उत्पन्न तीन सप्तको के अनुसरण में समर्थ थी। संगीत रत्नाकर के टीकाकार कल्लिनाथ के अनुसार इस वीणा को लोक में कहा जाता है। कुम्भा ने भी मतकोकिला को स्वरमण्डल कहा जाता है। यहाँ पर एक बात स्पष्ट करना आवश्यक है कि प्राचीनकालीन स्वरमण्डल और आधुनिक स्वरमण्डल दोनों में पर्याप्त अन्तर है।

श्री पोपले ने अपनी पुस्तक में पियानों को स्वरमण्डल कहा जाता है।

12. विपंची वीणा- स्वाति मुनि विपंची वीणा के अविष्कारक माने जाते हैं। कुछ मतानुसार पुष्करिणी पत्रों पर वर्षा की बूंदो के गिरने से उत्पन्न मधुर ध्वनि का अनुकरण करके उन्होंने अनेक वाद्यों का अविष्कार किया था। विपंची वीणा नौ तारो से युक्त होती थी, जिस पर सा, रे, ग, म. प. ध. नी स्वरो, की स्थापना की जाती थी। विपंची को कोण और उँगलियों दोनों से बजाया जाता था। भरत के अनुसार विपंची को कोण से बजाया जाता था और शारगदेव के अनुसार कोण और अंगुलियों दोनो से बजाई जाती थी। शारदेवनुसार विपंची नौ तारो युक्त थी जिसे सात शुद्ध स्वरों और विकृत स्वरो मिलाया जाता था। भरत ने इसे अंग तथा प्रमुख वीणाओं में रखा है। नाटथशास्त्र और संगीत रत्नाकर में विपंची वीणा की बनावट के बारे में कहीं भी वर्णन नहीं है। परन्तु कुछ शिलालेखों के चित्रों के आधार पर कहाँ जा सकता है कि यह हार्प के आकार की होगी। इस वीणा में दो तुम्बे होते थे और तारो को बौधने के लिए खुटियों का प्रयोग होता था।

13. रुद्रवीणा- पं. सोमनाथ, पं. अहोबल, तथा नारायण के ग्रंथ संगीतनारायण में इस वीणा का वर्णन प्राप्त होता है कहा जाता है कि इसका प्रचलन बहुत समय पहले से ही उत्तर भारत में होता आ रहा है। संगीतशास्त्र के रचयिता के वासुदेव शास्त्री ने अपने ग्रंथ के वाद्याध्याय में इसके स्वरूप के बारे में विस्तृत वर्णन किया है। इस वीणा में दो तुम्बे और 18 सारिकाएँ होती थी दस बड़ी और आठ छोटी। सितार की तरह रूद वीणा को भी बैठ कर आड़ा रखकर बजाया जाता था। सेनिया घराना रुद्र वीणा का प्रमुख धराना माना जाता है, उन्होंने केवल अपने वंश तक ही इस शिक्षा को सीमित रखा, इसी कारण रूद्र वीणा के वादक बहुत कम देखे जाते है।

सेनिया धराने ने रुद्र वीणा को सरस्वती वीणा के नाम से भी सम्बोधित किया है, किन्तु शास्त्रकारों ने इसे रुद्र वीणा ही कहाँ है।

14. विचित्र वीणा- विचित्र वीणा जिसे बटटा वीणा के नाम से भी जाना जाता है। प्राचीनकाल में इसे एकतन्त्री, घोषा आदि नामों से जाना जाता था। कहाँ जाता है। कि इस वीणा का वादन काठिन होने के कारण तानसेन और उसके वशजों ने विचित्र वीणा को छोडकर रुद्र और रबाब को अपनाया था इस कारण मध्यकाल में इस वीणा का लोप हो गया था। आधुनिक काल में इसका अधिक विकसित रूप प्रचार में आया है, हालांकि इसके कलाकार बहुत कम देखे जाते है. धीरे-धीरे इस वीणा की ओर लोगो की रुचि भी बढ़ती जा रही है और भविष्य से प्रचार भी बढ़ता जायेगा कहा जाता है कि रुद्र वीणा से परदे निकाल देने से विचित्र वीणा का निर्माण होता है, परन्तु सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाये तो इन दोनो वीणाओं में पर्याप्त अन्तर देखने को मिलता है।

15) महानाटक वीणा- महानाटक वीणा जिसे कर्नाटक संगीत की नवीन वीणा कहा जाता है, जिसका आकार तो साधारण वीणा के जैसा ही है और इसे अंगुलियों से बजाई जाती है। एक लकड़ी के टुकड़े से

तारो को दबाकर स्वर निकाले जाते थे। इस वीणा में गमको को भी निकाला जा सकता है। इस वीणा के दो मुख्य बाज (घराना) है पहला बाज जो रामपुर के स्वर्गीय वजीर खाँ का है. जिसमे धुपद-धमार गाया जाता था। दूसरा स्वर्गीय बन्दे अली खाँ का इस घराने में ख्याल अग से बीन वादन करते थे।

हिन्दुस्तानी संगीत की वीणाओ का प्रवाह / चित्रात्मक अध्ययन विकासक्रम

वीणा

प्राचीनकालीन वीणाएँ

अलाबु वीणा

कुंबिजिका वीणा

कुर्मी वीणा

गात्र बीना

नकुली वीणा

पिनाकीवीणा

सात्विक वीणा

मध्यकालीन वीणाएँ

रुद्र वीणा

एकतन्त्री वीणा

कच्छपी वीणा

किन्नरी वीणा

महती वीणा

मैसूर वीणा

आधुनिककालीन वीणाएँ

हिन्दुस्तानी वीणा

तुम्बरू वीणा

रुद्र वीणा

मोहनवीणा

विचित्र वीणा

कर्नाटकी वीणा

तंजौरी वीणा

महानाटक वीणा

सरस्वती वीणा

गोट्टुवाद्यम







निष्कर्ष-

प्राचीनकाल में समस्त भारतवर्ष में अनेक वीणाएँ प्रचलित भी जैसे अलावणी, आलापनी, एकतन्त्री, कात्यायनी, कुर्मी, पिनाकी, परिवादिनी आदि । कहाँ जाता है कि इन बीणाओं में क्लिष्टता और जटिलता होने के कारण इन वीणाओं लोप होता गया। वर्तमान समय में तो इन वीणाओं के स्वरूप तथा उनकी वादन, विधि य बारे में भी. कुछ खास वर्णन प्राप्त नहीं होता है। कुछ प्राचीनकालीन वीणाएँ जैसे त्रितंत्री, अलाबु, विचित्र वीणा, मतकोकिला आदि में परिवर्तन और उचित सुधार कर वर्तमान समय में देखने को मिलती है जैसे त्रितन्त्री के रूप में सितार अलाबु के रूप में तानपुरा और शततन्त्री वीणा के रूप में सन्तूर। ऐसा भी कहा जा सकता है कि आधुनिककाल में प्रसिद्ध तन्त्र वाद्य प्राचीनकालीन वीणाओं का ही सुधरा हुआ रूप है। आज इन वाद्यों के कलाकार भी देखने को मिलते है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. कुमार, ए. (2023). संगीत रत्नावली. अभिषेक पब्लिकेशंस.
2. भटनागर, आर. (2006). सितार वादन की शैलियां, कनिष्क पब्लिशर्स, डिस्ट्रिब्यूटर्स.
3. वालिया, डी. (2011). सितार के सरोकार. संजय प्रकाशन.
4. गर्ग, एल. (2002). संगीत विशारद संगीत कार्यालय. हाथरस.
5. मिश्र, एल. (1973). भारतीय संगीत वाद्य. भारतीय ज्ञानपीठ वाणी प्रकाशन.
6. निगम, आर (1996). सितार की उत्पति का विस्तृत विवेचन तथा सितार के बाज़ का विकास क्रम. मानक पब्लिकेशंस.
7. वीर, आर.ए. (2010). भारतीय संगीत का इतिहास, राधा पब्लिकेशंस.